स्त्री का पत्र

● रवीन्द्रनाथ ठाकुर

पूज्यवर,

आज पन्द्रह साल हुए हमारे ब्याह को। हम तब से साथ ही रहे। अब तक चिट्ठी लिखने का मौका ही नहीं मिला। तुम्हारे घर की मझली बहू जगन्नाथपुरी आई थी, तीर्थ करने।

आई तो जाना कि दुनिया और भगवान के साथ मेरा एक और नाता भी है। इसलिए आज चिट्ठी लिखने का साहस कर रही हूँ। इसे मझली बहू की चिट्ठी न समझना।

वह दिन याद आता है, जब तुम लोग मुझे देखने आए थे। मुझे बारहवाँ साल लगा था। सुदूर गाँव में हमारा घर था। पहुँचने में कितनी मुश्किल हुई तुम सबको। मेरे घर के लोग आव-भगत करते-करते हैरान हो गये।

विदाई की करुण धुन गूँज उठी। मैं मझली बहू बनकर तुम्हारे घर आई। सभी औरतों ने नई दुल्हन को जाँच परखकर देखा। सबको मानना पड़ा — बहू सुन्दर है।

मैं सुन्दर हूँ, यह तो तुम लोग जल्दी भूल गये। पर मुझमें बुद्धि है, यह बात तुम लोग चाहकर भी न भूल सके। माँ कहती थी, औरत के लिए तेज़ दिमाग भी एक बला है।

लेकिन मैं क्या करूँ। तुम लोगों ने उठते बैठते कहा, ''यह बहू तेज़ है।''

लोग बुरा भला कहते हैं सो कहते रहें। मैंने सब माफ कर दिया।

मैं छिप-छिप कर कविता लिखती थी। कविताएं थीं तो मामूली, लेकिन उनमें मेरी अपनी आवाज़ थी। वे कविताएं तुम्हारे रीति रिवाजों के बन्धनों से आज़ाद थीं।

मेरी नन्हीं बेटी को छीनने के लिए मौत मेरे बहुत पास आयी। उसे ले गयी, पर मुझे छोड़ गयी। माँ बनने का दर्द मैंने उठाया, पर माँ कहलाने का सुख न पा सकी।

इस हादसे को भी पार किया। फिर से जुट गयी रोज-मर्रा के काम काज में। गाय-भैंस, सानी-पानी में लग गयी। तुम्हारे घर का माहौल रूखा और घुटन भरा था। यह गाय-भैंस ही मुझे अपने से लगते थे। इसी तरह शायद जीवन बीत जाता। आज का यह पत्र लिखा ही नहीं जाता। लेकिन अचानक मेरी गृहस्थी मे ज़िन्दगी का एक बीज आ गिरा। यह बीज जड़ पकड़ने लगा और गृहस्थी की पकड़ ढीली होने लगी। जेठानी जी की बहन, बिन्दू, अपनी माँ के गुजरने पर, हमारे घर आ गई।

मैंने देखा तुम सभी परेशान थे। जेठानी जी के पीहर की लड़की, न रूपवती न धनवती। जेठानी दीदी इस समस्या को लेकर उलझ गयी। एक तरफ बहन का प्यार तो एक तरफ ससुराल की नाराज़गी।

अनाथ लड़की के साथ ऐसा रूखा बर्ताव होते देख मुझसे रहा न गया। मैंने बिन्दू को अपने पास जगह दी। जेठानी दीदी ने चैन

की साँस ली। गलती का बोझ मुझ पर आ पड़ा।

पहले पहले मेरा स्नेह पाकर बिन्दु सकुचाती थी। पर धीरे-धीरे वह मुझे बहुत प्यार करने लगी। बिन्दू ने प्रेम का विशाल सागर मुझ पर उड़ेल दिया। मुझे कोई इतना प्यार और सम्मान दे सकेगा, यह मैंने सोचा भी न था।

बिन्दू को जो प्यार दुलार मुझसे मिला वह तुम लोगों को फूटी आँखों न सुहाया। याद आता है वह दिन, जब बाजूबन्ध गायब हुआ। बिन्दू पर चोरी का इल्ज़ाम लगाने में तुम लोगों को पल भर की झिझक न हुई।

बिन्दू के बदन पर जरा सी लाल घमोरी क्या निकली, तुम लोग झट बोले — चेचक। किसी इल्ज़ाम का सुबूत न था। सुबूत के लिए उसका ''बिन्दू'' होना ही काफी था।

बिन्दू बड़ी होने लगी। साथ-साथ तुम लोगों की नाराज़गी भी बढ़ने लगी। जब लड़की को घर से निकालने की हर कोशिश नाकाम हुई तब तुमने उसका ब्याह तय कर दिया।

लड़के वाले लड़की देखने तक न आए। तुम लोगों ने कहा, ब्याह लड़के के घर से होगा। यही उनके घर का रिवाज है।

सुनकर मेरा दिल काँप उठा। ब्याह के दिन तक बिन्दू अपनी दीदी के पाँव पकड़ कर बोली, ''दीदी मुझे इस तरह मत निकालो। मैं तुम्हारी गौशाला में पड़ी रहूँगी। जो कहोगी सो करूँगी...।''

बेसहारा लड़की सिसकती हुई मुझसे बोली, ''दीदी क्या मैं सचमुच अकेली हो गई हूँ?''

मैंने कहा, ''ना बिन्दी ना। तुम्हारी जो भी दशा हो, मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ।'' जेठानी दीदी की आँखों में आँसू थे। उन्हें रोक कर वह बोलीं, ''बिन्दिया, याद रख, पति ही पत्नी का परमेश्वर है।''

तीन दिन हुए बिन्दू के ब्याह को। सुबह

गाय-भैंस को देखने गोशाला में गयी तो देखा एक कोने में पड़ी थी बिन्दू। मुझे देख फफक कर रोने लगी।

बिन्दू ने कहा कि उसका पति पागल है। बेरहम सास और पागल पति से बचकर वह बड़ी मुश्किल से भागी।

गुस्से और घृणा से मेरे तन बदन में आग लग गई। मैं बोल उठी, "इस तरह का धोखा भी भला कोई ब्याह है? तू मेरे पास ही रहेगी। देखूँ तुझे कौन ले जाता है।"

तुम सबको मुझ पर बहुत गुस्सा आया। सब कहने लगे, "बिन्दू के ससुराल वाले उसे लेने आ पहुँचे।

मुझे अपमान से बचाने के लिए बिन्दू खुद ही उन लोगों के सामने आ खड़ी हुई। वे लोग बिन्दू को ले गये। मेरा दिल दर्द से चीख उठा।

मैं बिन्दू को रोक न सकी। मैं समझ गयी कि चाहे बिन्दू मर भी जाए वह अब कभी हमारी शरण में नहीं आएगी।

तभी मैंने सुना कि बड़ी बुआजी जगन्नाथपुरी तीर्थ करने जाएंगी। मैंने कहा, "मैं भी साथ जाऊँगी।"

मैंने अपने भाई शरत को बुला भेजा। उससे बोली, "भाई अगले बुधवार मैं पुरी जाऊँगी। जैसे भी हो बिन्दू को भी उसी गाड़ी में बिठाना होगा।"

उसी दिन शाम को शरत लौट आया। उसका पीला चेहरा देखकर मेरे सीने पर साँप लोट गया। मैंने सवाल किया, "उसे राजी नहीं कर पाये?"

"उसकी जरूरत नहीं। बिन्दू ने कल अपने आपको आग लगा कर आत्महत्या कर ली।" शरत ने उत्तर दिया। मैं स्तब्ध रह गयी।

मैं तीर्थ करने जगन्नाथपुरी आई हूँ। बिन्दू को यहाँ तक आने की ज़रूरत नहीं पड़ी। लेकिन मेरे लिए यह ज़रूरी था।

जिसे लोग दुख-कष्ट कहते हैं, वह मेरे जीवन में नहीं था। तुम्हारे घर में खाने-पीने की कमी कभी नहीं हुई। तुम्हारे बड़े भैया का चरित्र जैसा भी हो, तुम्हारे चरित्र में कोई

खोट न था। मुझे कोई शिकायत नहीं है।

लेकिन अब मैं लौटकर तुम्हारे घर नहीं जाऊँगी। मैंने बिन्दू को देखा। घर गृहस्थी मे लिपटी औरत का परिचय मैं पा चुकी। अब मुझे उसकी ज़रूरत नहीं। मैं तुम्हारी चौखट लाँघ चुकी। इस वक्त मैं अनन्त नीले समुद्र के सामने खड़ी हूँ।

तुम लोगों ने अपने रीति-रिवाजों के परदे में मुझे बन्द कर दिया था। न जाने कहाँ से बिन्दू ने इस परदे के पीछे झाँक कर मुझे देख लिया। और उसी बिन्दू की मौत ने हर परदा गिराकर मुझे आज़ाद किया। मझली बहू खत्म हुई।

क्या तुम सोच रहे हो कि मैं अब बिन्दू की तरह मरने चली हूँ। डरो मत। मैं तुम्हारे साथ ऐसा पुराना मज़ाक नहीं करूँगी।

मीराबाई भी मेरी तरह औरत थी। उसके बन्धन भी कम नहीं थे। उनसे मुक्ति पाने के लिए उसे आत्महत्या तो नहीं करनी पड़ी। मुझे अपने आप पर भरोसा है। मैं जी सकती हूँ। मैं जीऊँगी।

तुम लोगों के आश्रय से मुक्त

मृणाल

साथियों,

अक्षरों की धुन पर कहानियों से सजी पहली अंताक्षरी आपके हाथ में है। इसको और मज़ेदार बनाने के लिए आप सरल शब्दों में अपनी कही-अनकही कहानियाँ और सुझाव जल्द से जल्द लिख भेजें।

आपका
शिवसिंह नयाल
बी-6/62 'अलारिप्पु' पहली मंजिल
सफदरजंग इन्क्लेव
नई दिल्ली-110029